भगत कबीर – सबद १६
अवर मूए किआ सोगु करीजै ॥
रागु गउड़ी, भगत कबीर, गुरु ग्रंथ साहिब, ३२५

अवर मूए किआ सोगु करीजै ॥
तउ कीजै जउ आपन जीजै ॥१॥
मै न मरउ मरिबो संसारा ॥
अब मोहि मिलिओ है जीआवनहारा ॥१॥ रहाउ ॥
इआ देही परमल महकंदा ॥
ता सुख बिसरे परमानंदा ॥२॥
कूअटा एकु पंच पनिहारी ॥
टूटी लाजु भरै मति हारी ॥३॥
कहु कबीर इक बुधि बीचारी ॥
ना ओहु कूअटा ना पनिहारी ॥४॥१२॥

सार: शरीर और आत्मा, स्वयं और अन्य - यह सभी भेद केवल मन की निर्मित धारणाएँ हैं। यह मानसिक विभाजन हमें अस्तित्व की मूलभूत एकता से दूर कर अलगाव की मिथ्या का अनुभव कराते हैं। जब हम स्वयं को खोजी साधक के रूप में देखते हैं तब वास्तव में कोई खोजने वाला और कोई खोजने की वस्तु अलग नहीं बचती। हमारे बाहर सब कुछ उसी अविभाज्य चेतना का प्रतिबिंब है। अपने अस्थायी शरीरों और इंद्रियों से दूर जाकर हम उस शाश्वत आत्मा की खोज करते हैं जो सार्वभौमिक एकता में विद्यमान है। असली मृत्यु शरीर का नाश नहीं, बल्कि आध्यात्मिक अज्ञानता में है जबकि सृष्टि की एकता को अपनाना असली ज़िंदगी की शुरुआत का प्रतीक है। दृष्टिकोण में यह बदलाव दिखाता है कि क्षणभंगुर खुशियों को कसकर पकड़े रहने के बजाय यह समझ लें कि वास्तव में कुछ भी खोया या पाया नहीं जा सकता। जब यह बोध होता है तब दुःख की पीड़ा एक गहन चेतना में रूपांतरित हो जाती है। यही सत्य है और यही स्थायी है।

अवर मूए किआ सोगु करीजै ॥
जब दूसरे लोग मर जाते हैं तब तुम शोक क्यों करते हो? रूपक की दृष्टि से इसका अर्थ यह हो सकता है कि आध्यात्मिक रूप से पिछड़े हुए लोगों के प्रति अफ़सोस या आलोचना क्यों रखें।

तउ कीजै जउ आपन जीजै ॥१॥
अफ़सोस तभी करो जब तुम सदा जीवित रह सको। यह रूपक बताता है कि कोई व्यक्ति तभी आलोचनात्मक हो सकता है जब उसमें स्वयं कोई अवगुण या आध्यात्मिक कमी न हो। (१)

मै न मरउ मरिबो संसारा ॥
मैं नहीं मरता मगर यह संसार नष्ट हो जाता है। यह बोध कि विवेक, आंतरिक आत्मा नश्वरता से परे है। केवल बाह्य भौतिक संसार ही नष्ट होता है।

अब मोहि मिलिओ है जीआवनहारा ॥१॥ रहाउ ॥
अभी मैंने जीवन का सार खोजा है। यह जागरूकता एक ऐसी अवस्था को प्रकट करती है जो अस्तित्व के असली स्वरूप को प्रकाशित करती है। (१)(विराम)

इआ देही परमल महकंदा ॥
शरीर को सुगंधित बनाने के लिए इसका इत्र से अभिषेक किया जाता है। यह हमारे अहंकार का प्रतीक है जो मान्यता और महत्व के लिए बाहरी पहचान बनाए रखने पर केंद्रित है।

ता सुख बिसरे परमानंदा ॥२॥
लेकिन ऐसा करते हुए वह परम शाश्वत आनंद को अपनाना भूल जाते हैं। यह चूक सतही खुशी की खोज को उजागर करती है जबकि आंतरिक बोध के परिवर्तनकारी आनंद को अनदेखा करती है। (२)

कूअटा एकु पंच पनिहारी ॥

एक कुआँ है जिसमें पाँच जल-वाहक यन्त्र हैं। रूपक की दृष्टि से शरीर एक कुआँ है और इन्द्रियाँ पाँच जल-वाहक के रूप में कार्य करती हैं जो दर्शाता है कि हम बाहरी दुनिया के अनुभवों को कैसे ग्रहण करते हैं।

टूटी लाजु भरै मति हारी ॥३॥

जब कुँए की बाल्टी की रस्सी टूट जाती है तब उसमें भरा पानी बाहर गिर जाता है। यह दर्शाता है कि जब विवेक दिशाहीन हो जाता है तब इन्द्रियाँ अनियंत्रित हो जाती हैं जिसके परिणामस्वरूप नुकसान ज्ञान का होता है।

कहु कबीर इक बुधि बीचारी ॥

कबीर कहते हैं कि यदि हम वास्तव में संपूर्ण सृष्टि को एकीकृत, सर्वव्यापी सार के रूप में प्रतिबिंबित समझते हैं,

ना ओहु कूअटा ना पनिहारी ॥४॥१२॥

तब न तो कोई कुआँ है और न ही जलवाहक, जो इस परम बोध का प्रतीक है कि शरीर और इन्द्रियाँ अद्वैत, सृष्टि की एकता, अस्तित्व के सार को समझने के उपकरण हैं। (४)(१२)

तत्त्व: भगत कबीर एक रूपक के माध्यम से गहन अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं। वह शरीर की तुलना एक कुएँ से करते हैं जिसमें पाँच इंद्रियाँ जल खींचने वाले बर्तन के समान हैं। जिस प्रकार एक कुआँ जल खींचने के प्रयास से जल प्रदान करता है उसी प्रकार हमारा शरीर इंद्रियों को हमारे अनुभवों से ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम बनाता है। हालाँकि जब मन का प्रतिनिधित्व करने वाली रस्सी जागरूकता से अपना संबंध तोड़ देती है तब हम अपने द्वारा एकत्रित ज्ञान पर अपनी पकड़ खो देते हैं ठीक उसी तरह जैसे बाल्टी गिरने पर पानी व्यर्थ चला जाता है। यह प्रभावशाली रूपक इस बात पर ज़ोर देता है कि अगर इंद्रियों को अनियंत्रित छोड़ दिया जाए तब वह मूल्यवान आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि हासिल किये बग़ैर ही बाहरी दुनिया की अंतहीन खोज में लगी रहती हैं। सच्ची जागरूकता इंद्रियों को त्यागने

से नहीं बल्कि उन्हें अद्वैत की स्थिति के साथ सामंजस्य बिठाने से प्राप्त होती है जो हमें एकत्व के गहन ज्ञान को समझने में सक्षम बनाती है।

सबद व्याख्या **विनइंदर कौर** और **अमरदीप सिंह**

Oneness In Diversity Research Foundation

वेबसाइट: OnenessInDiversity.com

ईमेल: onenessindiversityfoundation@gmail.com